खण्ड 5
धर्म और राजनीति

ignou
THE PEOPLE'S
UNIVERSITY

खण्ड 5 धर्म और राजनीति

परिचय

जैसा कि आपने खंड चार में पढ़ा है इसमें सभी इकाइयाँ पहचानों से संबंधित है और ये सब गैर–धार्मिक पहचान है। खंड पाँच का संबंध धार्मिक पहचानों से है। यह धर्म और राजनीति से संबंधित है। इस खण्ड में दो इकाइयाँ है। इकाई संख्या 13 का संबंध धर्म निरपेक्षता से है। इसमें धर्म एवं राज्य के बीच संबंधों की चर्चा की गयी है, तथा धर्म का समुदाय, व्यक्ति, के बीच क्या संबंध है इसकी भी चर्चा की गयी है। इसके अंदर स्वतंत्रता, समानता, एवं नैतिकता जैसे मूल्य भी शामिल है। इकाई संख्या 14 का संबंध साम्प्रदायिकता से है। इसमें साम्प्रदायिकता की परिभाषा एवं इसका व्यक्तियों के अधिकार और राज्य के बीच संबंध की भी चर्चा की गयी है।

ignou
THE PEOPLE'S
UNIVERSITY

इकाई 13 धर्मनिरपेक्षता*

संरचना

13.0 उद्देश्य
13.1 परिचय
13.2 धर्मनिरपेक्षता क्या है?
13.3 भारतीय संविधान में धर्मनिरपेक्षता
13.4 गैर–धर्मनिरपेक्षता
13.5 धर्मनिरपेक्षता और धार्मिक समूह
13.6 सारांश
13.7 संदर्भ सूची
13.8 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

13.0 उद्देश्य

इस इकाई का उद्देश्य भारत में धर्मनिरपेक्षता के प्रमुख मुद्दों के बारे में जानकारी प्रस्तुत करना है। इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् आप यह जान पाऐंगे :

- धर्मनिरपेक्षता एवं धर्मनिरपेक्षीकरण की व्याख्या कर सकेंगे;
- धर्मनिरपेक्षता से संबंधित मुद्दों की व्याख्या कर सकेंगे;
- भारत में धर्मनिरपेक्षता के प्रमुख तर्कों को समझा सकेंगे; तथा
- इस इकाई की तुलना इकाई 14 से करके ताकि धर्मनिरपेक्षता और सांप्रदायिकता के बीच अंतर को रेखांकित कर सकेंगे।

13.1 परिचय

धर्मनिरपेक्षता विश्व में आज के राजनीतिक परिदृश्य में एक महत्वपूर्ण मुद्दा है। ''21 लेसन्स फॉर द 21st सेंचरी'' के लेखक युवाल नोहा हरारी ने 21वीं सदी में धर्मनिरपेक्षता को सबसे प्रमुख 21 मुद्दों में शामिल किया है। भारत में भी, धर्मनिरपेक्षता बहुत लोकप्रिय और राजनीतिक एवं शैक्षिक मुद्दा बन गया हैं। कुछ प्रश्न हमेशा धर्मनिरपेक्षता के बारे में उठाये जाते हैं: इसका धर्म के साथ संबंध, राज्य एवं अन्य संस्थाओं के संबंध, विश्वास, धार्मिक समुदाय, व्यक्ति का स्थान, लोकतांत्रिक मूल्य, स्वतंत्रता, धार्मिक समानता एवं अन्य मूल्य।

13.2 धर्मनिरपेक्षता क्या हैं?

धर्मनिरपेक्षता का प्रमुख मुद्दा धर्म हैं। समाज में धर्मनिरपेक्षता का अर्थ है कि किसी एक ध ार्म सर्वोच्यता, धार्मिक अल्पसंख्यकों के साथ भेदभाव तथा उनके साथ उत्पीड़न (persecution) में परिणित नहीं होती है। जैसा कि ऊपर कहा गया है यह इस पर निर्भर करता है कि धर्म का संबंध राज्य, संस्थाओं, व्यक्ति इत्यादि के साथ किस प्रकार का है। धर्मनिरपेक्षता के तीन प्रकार के अर्थ हैं: – प्रथम, यह धर्म एवं राज्य के बीच संबंधों के बारे में चर्चा करती

*प्रोफेसर जगपाल सिंह, राजनीति विज्ञान संकाय, इग्नू, नई दिल्ली

है दूसरा, भारत में इसकी प्रासंगिकता की संभावना या असंभावना के बारे में है तथा तीसरा, सभी धर्मों के साथ इसका समान रूप से सम्मान करना अर्थात् सर्व–धर्म–सम्भाव। इन सभी पहलुओं पर संविधान सभा के अंदर भी बहस हुई थी। जैसा कि आप इस इकाई में पढेंगे, भारत में धर्मनिरपेक्षता के ऊपर बहस, संविधान सभा में बहस, तथा शैक्षिक जगत में भी विभिन्न प्रकार के अर्थ निकाला जा रहे हैं। संविधान सभा के अंदर इन सभी या कुछ मुद्दों पर बहस शुरू हुई थी।

राजीव भार्गव के अनुसार, धर्मनिरपेक्षता की सफलता प्रमुख कारकों पर निर्भर करती है। ये कारक है लोकतंत्र और राज्य की स्वतंत्रता। राज्य की स्वतंत्रता समाज के विभिन्न वर्गों एवं जनजातिय समूहों के दबाव से होनी चाहिये, यह तभी संभव है जब राज्य की उपस्थिति हो। लोकतंत्र स्वच्छ राजनीति पर निर्भर करता है, अर्थात् सभी वर्गों के बीच शांतिपूर्ण प्रतिस्पर्धा या हिंसा के बिना प्रतिस्पर्धा। वास्तव में, धर्मनिरपेक्षता कुछ मूल्यों पर टिकी है जो कि लोकतंत्र एवं समान नागरिकता से संबंधित है। युवाल हरारी ने यह रेखांकित किया कि, धर्म–निरपेक्ष समाज में लोग विभिन्न धर्मों से संबंध रखते है जैसे हिन्दु, मुस्लिम, पारसी और नास्तिक। ये कुछ निश्चित मूल्यों का पालन करते हैं। ये कोड कुछ नैतिक मूल्यों और धर्म–निरपेक्ष आदर्शों पर टिके हैं जैसे सत्य, करूणा, समानता, स्वतंत्रता, साहस एवं उत्तरदायित्व। धर्म–निरपेक्षवादियों के लिये सत्य विश्वास से अलग है तथा सत्य का कोई एक स्त्रोत नहीं है। करूणा या दया का मतलब ''पीड़ा को समझना'' या सबसे संभव तरीके से संसार की पीड़ा कम करना है। क्योंकि पीड़ा या कष्ट सार्वभौमिक है, सत्य और करूणा भी समानता की प्रतिबद्धता का परिणाम है। सत्य की खोज सोचने की स्वतत्रंता से प्राप्त की जा सकती है एवं उसके साथ प्रयोग एवं जाँच से भी प्राप्त की जा सकती है। साहस का मतलब पक्षपात एवं दमन या उत्पीड़न से मुकाबला करना है, अर्थात् अज्ञानता को स्वीकार करना तथा ''अंजानी वस्तु की खोज करना है''। उत्तरदायित्व का मतलब है उच्च सत्ता पर विश्वास न करना या समाज की समस्याओं का सामना करना एवं उन्हें दूर करने का प्रयास करना अर्थात् कोई भी दैविक शक्ति इसे दूर नहीं कर सकती यह भावना उत्तरदायित्व की भावना कहलाती है। मानवीय विकास स्वयं के ज्ञान एवं उनकी करूणा पर निर्भर करता है।

धर्म निरपेक्षता किसी धर्म–निरपेक्ष राज्य में भी हो सकती है। धर्म–निरपेक्ष राज्य क्या है? डी. ई. स्मिथ के ''इंडिया एज ए सेक्यूलर स्टेट'' के मॉडल में, धर्म–निरपेक्ष राज्य की परिभाषा इस प्रकार दी जा सकती है :– इसका संबंध तीन विषयों से है पहला, व्यक्ति एवं धर्म के बीच संबंधों से राज्य दूर रहे (धार्मिक स्वतंत्रता), दूसरा, राज्य व्यक्ति एवं राज्य के बीच संबंधों से धर्म दूर रहे (व्यक्ति एक नागरिक के रूप में) तथा तीसरा, राज्य को निरपेक्ष रहना चाहिए। स्मिथ के दृष्टिकोण में, भारत एक सफल लोकतंत्र वाला देश है जहाँ पर धर्मनिरपेक्षता की विशेषताऐं हिन्दू धर्म में स्थित है। लेकिन भारत में धर्म निरपेक्ष राज्य की कुछ चुनौतियों भी है क्योंकि जाति एवं समुदाय के प्रति निष्ठा कभी भी आपसी कलह या सांप्रदायिक विभाजन में बदल सकती है। लेकिन गैलेन्टर ने स्मिथ की परिभाषा को सही नहीं माना, उनकी आलोचना करते हुए कहा कि भारतीय राज्य धर्मनिरपेक्षता के मूल सिद्धांतों से अलग हो रहा है क्योंकि यह धार्मिक स्कूलों एवं संस्थाओं को आर्थिक मदद करता है, हिन्दूवाद को बढ़ावा देता है तथा यह धर्मनिरपेक्षता के सिद्धांतों से समझौता करता है। उनके अनुसार धर्मनिरपेक्षता राज्य की सफलता उसकी धर्म की एक नैतिक अवधारणा पर निर्भर करती है अर्थात उसके पास धर्म का विश्लेषण करने तथा इस पर निर्णय लेने की क्षमता है। उनकी राय में भारत में धर्मनिरपेक्षता के साथ समझौता संविधान सभा की बहसों में देखा जा सकता है जहाँ पर धार्मिक स्वतंत्रता (धार्मिक पूजा की स्वतंत्रता, राज्य भाषाई और धार्मिक अल्पसंख्यकों की पहचान), पूजा अर्चना, नागरिकता (सार्वभौमिक आचार

संहिता, धार्मिक आधार पर आरक्षण), राज्य की निरपेक्षता तथा (क्या सरकारी मदद पाने वाले स्कूलों को राज्य निर्देश दे) पर बहस हुई।

अकिल बिलग्रामी धर्मनिरपेक्षता के सिद्धांत जिसमें केवल राज्य निरपेक्ष एवं विभिन्न धर्मों से समान दूरी की अवधारणा को चुनौती देते हैं। वे इस सिद्धांत को खारिज करते हैं तथा एक वैकल्पिक सिद्धांत प्रदान करते हैं। उनका तर्क है कि धर्मनिरपेक्षता प्रत्येक ऐतिहासिक संदर्भ में नहीं उदित होती है। यह किसी विशेष संदर्भ में ही उदित होती है। यह उन परिस्थितियों में भी देखी जा सकती है जो आधुनिक नहीं है। धर्मनिरपेक्षता, निरपेक्ष एवं निरपेक्षीकरण से अलग है। धर्मनिरपेक्षता एक राजनीतिक सिद्धांत है। कोई भी व्यक्ति धर्म–निरपेक्ष हो सकता है और वह भी समान रूप से धार्मिक पहचान रख सकता है।

13.3 भारतीय संविधान में धर्मनिरपेक्षता

भारतीय संविधान में धर्म–निरपेक्ष शब्द को शामिल नहीं किया जब इसे 26 जनवरी, 1951 को लागू किया गया था। यद्यपि धर्मनिरपेक्षता को संविधान में शामिल नहीं किया गया हो लेकिन सत्यता यही है कि जब भारत लोकतांत्रिक देश बना तब इसके मौलिक सिद्धांतों में धर्मनिरपेक्षता को शामिल किया गया था। इसका संविधान में जिक्र नहीं था, लेकिन बाद में 42 वें संशोधन के माध्यम से इसे 1976 में संविधान की प्रस्तावना में जोड़ा गया। तत्पश्चात् सर्वोच्च न्यायालय ने बोम्मई केस में निर्णय देते हुए इसे संविधान की प्रमुख विशेषता भी माना था। संविधान के अनुच्छेद 25–30 के अंतर्गत भी धार्मिक अल्पसंख्यकों के अधिकार का प्रावधान दिया गया है जो कि संविधान सभा की बहसों से निकल कर आया था। ये सब धर्मनिरपेक्षता के मूल्यों की महत्ता को इंगित करते हैं। लेकिन क्या धर्मनिरपेक्षता को भारतीय संविधान में शामिल किया जाना चाहिये या नहीं, भारत किस प्रकार का धर्म–निरपेक्ष राज्य होना चाहिये? (''एक धर्म निरपेक्ष राज्य में एक धार्मिक देश''), क्या राज्य की धर्म से दूरी धर्मनिरपेक्षता का प्रमाण है, क्या एक धर्म निरपेक्ष राज्य एक धर्म निरपेक्ष समाज पर निर्भर करता है, क्या वह राज्य जो सभी धर्मों का समान आदर करे, कुछ प्रश्न थे जिन पर संविधान सभा ने 17 अक्टूबर, 1949 को चर्चा की थी। इन प्रश्नों पर संविधान सभा में सबकी राय अलग–अलग थी। लेकिन अंततया, संविधान सभा ने यह निर्णय लिया कि संविधान की प्रस्तावना में धर्म–निरपेक्ष शब्द को शामिल नहीं किया जायेगा। फिर भी सभी सदस्यों के बीच यह सहमति बनी कि भारत को एक धर्म–निरपेक्ष राज्य स्थापित किया जाये, तथा अधिकांश सदस्यों में यह भी सहमति बनी कि राज्य को धर्म से अलग रहना चाहिये ताकि समाज का लोकतांत्रिकरण किया जा सके।

शेफाली झा ने धर्मनिरपेक्षता पर तीन वैकल्पिक तर्कों की पहचान की जो कि संविधान सभा की बहस में दिए गए थे। उसके अनुसार पहला तर्क यह था कि ''धर्मनिरपेक्षता का कोई सिद्धांत नहीं'' हैं। इस तर्क के मानने वालों का यह कहना है कि राज्य को धर्म के बारे में नहीं सोचना चाहिये। धर्म व्यक्ति का निजी मामला है तथा धर्म और राज्य दोनों को इससे अलग रहना चाहिये। लोगों को धर्म की उपासना करने की स्वतंत्रता है क्योंकि यह उनका निजी मसला है। राज्य को व्यक्ति की पहचान एक नागरिक के रूप में करनी चाहिए न कि धार्मिक रूप में। इस तर्क के समर्थकों में के.टी. शाह, ताजमुल हुसैन तथा एम. मसानी शामिल हैं। दूसरा तर्क भी यह है कि धर्म और राज्य को अलग होना चाहिये। लेकिन उनका तर्क पहले तर्क के विपरीत था। पहला तर्क धर्म को निजी मसला बताता है जबकि दूसरा तर्क धर्म को वास्तविक सच्चाई बताता है। धर्म के साथ संबंध राज्य को कमजोर ही नहीं करेगा, लेकिन इससे धर्म का महत्व कम होगा। बहुसंख्यकों की बातों (whims) जो बदलते रहते हैं, को लोकतांत्रिक राज्यों में ज्यादा तरजीह नहीं देनी चाहिये। तीसरा तर्क जो कि

शेफाली से प्रस्तुत करती है वह है ''धर्मनिरपेक्षता के साथ समान सम्मान का सिद्धांत''। अर्थात् राज्य को सभी धर्मों का सम्मान करना चाहिये क्योंकि भारत में धर्म लोगों के जीवन का महत्वपूर्ण हिस्सा है। इस तर्क के सबसे ज्यादा समर्थक के.एम. मुंशी थे। उन्होंने तर्क दिया ''हमें एक भारतीय विशेषताओं वाली धर्मनिरपेक्षता का विकास करना है'' ("We had to evolve a characteritucllly Indian seculasism") उनका मानना था कि भारत का कोई राज्य–धर्म नहीं हो सकता तथा धर्म और राज्य के बीच एक स्थिर रेखा भी नहीं खींची जा सकती है। इस मत के अनुसार एक ऐसी धर्मनिरपेक्षता जो धर्म के निरादर पर आधारित हो, क्योंकि अधिकांष धर्म सहनशीलता का पाठ पढ़ाते है, यदि राजय सार्वजनिक क्षेत्र में धर्म को मान्यता देती है तो इससे धार्मिक झगड़े नहीं बढ़ेगें। जय प्रकाश नारायण का मानना था कि धर्म से नहीं बल्कि धर्म का सामाजिक, आर्थिक और राजनीतिक उद्देश्य की पूर्ति के लिये इस्तेमाल करने से सांप्रदायिक हिंसा को बढ़ावा मिलता है।

अभ्यास प्रश्न 1

टिप्पणीः क) अपने उत्तर के लिए नीचे दिए गए स्थान का प्रयोग कीजिए।

ख) अपने उत्तर का मिलान इकाई के अंत में दिए गए उत्तर से करें।

1) धर्मनिरपेक्षता क्या है?

....

....

....

....

....

....

2) संविधान सभा में धर्मनिरपेक्षता के ऊपर प्रमुख बिन्दुओं की चर्चा पर बहस के कौन–कौन से बिन्दु थे?

....

....

....

....

....

13.4 धर्मनिरेपक्षता विरोधी

जो बिंदु धर्मनिरपेक्षता के संबंध में संविधान सभा में चर्चित थे वे बाद में भी चर्चा में आये। इनके एक सबसे महत्वपूर्ण बिन्दू था ''जिसे धर्मनिरपेक्षता विरोधी'' (एंटी–सेक्युलेरिज्म) के नाम से जाना गया है। जैसा कि संविधान सभा में भी तर्क दिया गया था, इस तर्क के मानने वाले धर्मनिरपेक्षता के विरोधी नहीं है लेकिन वे धर्म और राज्य को अलग मानने के सिद्धांत के खिलाफ है। वे दोनों ही सिद्धांतों यानि कि सांप्रदायिकता–कट्टरवाद (हिन्दुत्वा) एवं धर्मनिरपेक्षता के आलोचक हैं। इनके अनुसार भारत क्योंकि धार्मिक समाज है इसलिये धर्म और राज्य को अलग नहीं किया जा सकता है। वे राज्य एवं धर्म को अलग मानने के

सिद्धांत को पश्चिमी सिद्धांत मानते हैं, जो कि भारत जैसे धार्मिक देश के लिये मान्य नहीं है। वास्तविक धर्मनिरपेक्षता की जड़ भारतीय परंपरा में निहित है, जो कि सहनशील है। धर्मनिरपेक्षता को तभी प्राप्त किया जा सकता है जब सभी धर्मों का सम्मान हो। अर्थात् ''सर्व धर्म समभाव''। धर्मनिरपेक्षता विरोधी लोगों में भीखू पारेख, टी. एन. मदान और आषीष नंदी प्रमुख हैं। विशेष रूप से मदान यह मानते है कि धर्मनिरपेक्षता ईसाइ धर्म की देन हैं, नंदी अपनी आलोचना को एक ''ऐंटि–सेक्यूलेरज्म ऐजेंडा'' (धर्मनिरपेक्षता विरोधी ऐजेंडा'') की संज्ञा देते हैं। अचिन वनायक के अनुसार वे भारतीय समाज के छः सामान्य विषयों पर फोकस करते हैं वे हैंः– आधुनिकता, संस्कृति की समझ, सभ्यता, धर्म और हिन्दुवाद, भूत एवं वर्तमान, तथा धर्मनिरपेक्षता एंव धर्म–निरपेक्षीकरणः विशिष्टता एवं सार्वभौमिक, व्यक्तिवाद एवं समुदायवाद तथा नव–गाँधीवाद। उनमें एक समान बिंदु पर सहमती है। वह बिंदु हैः धर्मों के साथ एक जैसा व्यवहार, एक सम्मान करना चाहिये और भारतीय समाज एक सहनशील परंपरा का समाज है।

राजीव भार्गव का यह तर्क था कि धर्मनिरपेक्षता के सिद्धांत की पुनः व्याख्या या पुनः समीक्षा करने की जरूरत है। राज्य एवं चर्च के संबंधों पर फोकस करने के बजाय निम्न बिंदुओं पर अधिक फोकस करना चाहिये, (i) धर्मनिरपेक्षता को धार्मिक विविधता के आधार पर देखना चाहिए, (ii) विविधता को सत्ता संबंधों के रूप में समझना चाहिये, धर्म–संबंधी प्रभुत्व की पोटेंशियल को भी समझना चाहिए, (iii) इन दो बिंदुओं के अनुसार धर्मनिरपेक्षता को संस्थात्मक रूप में भी देखता है, धर्मनिरपेक्षता धर्म के विरूद्व नहीं है, लेकिन यह धर्म को संस्थागत या धर्म के आधार पर प्रभुत्व का विरोधी है, (iv) सैद्वांतिक दूरी के सिद्धांत के साथ धर्म–निरपेक्ष राज्य सभी धर्मों के साथ सम्मान कर सकता है। वे भारतीय धर्मनिरपेक्षता को दूरी की सिद्धांत पर देखते हैं। सैद्धांतिक दूरी की अवधारणा राज्य के धर्म के समावेशी के विषय पर लचीला दृष्टिकोण दर्शाता है तथा धर्म के साथ राज्य अपना संबंध रखे या न रखे तथा कानून और व्यवस्था किस आधार पर राज्य धर्म के मामले में हस्तक्षेप करे, यह परिपेक्ष पर निर्भर करता है''। वे धर्मनिरपेक्षता को दो प्रकार की मानते हैं, एक राजनीतिक तथा दूसरी निरपेक्षता।

कुछ अन्य विद्वानों (स्मिथ और तांबिया) के अनुसार, भारत में धर्मनिरपेक्षता संकट का सामना कर रही है। इसके लिये आंतरिक एवं बाहरी कारक जिम्मेदार है। बाहरी कारकों में काँग्रेस का कमजोर होना, राज्य की केन्द्रिकरण सत्ता में वृद्धि, पंजाब एवं कश्मीर में अलगाववादी शक्तियों, और मंडल आयोग की सिफारिशों को लागू करना। आंतरिक कारकों में शामिल है, विश्व दृष्टिकोण को संपूर्ण दृष्टि से देखना जिसमें धर्मनिरपेक्षता भी इसका भाग है (मैदान एवं नदीं), तथा समान दूरी की माँग जो कि कोई भी राज्य स्वीकार नहीं कर सकता (चटर्जी)। तांबिया के अनुसार यह संकट भारतीय संविधान में धर्मनिरपेक्षता स्पष्ट धारणा न होने के कारण पैदा हुआ है। नंदी और मदान का मानना है कि धर्मनिरपेक्षता में प्रासंगिकता या वैधानिकता का अभाव है।

13.5 धर्मनिरपेक्षीकरण और धार्मिक समूह

धर्मनिरपेक्षता और निरपेक्षीकरण दोनों अंर्तसंबंधी अवधारणाएं है। लेकिन शैक्षिक एवं राजनीतिक परिप्रेक्ष्य में धर्मनिरपेक्षता पर ज्यादा ध्यान दिया जाता है। *इकनौमिक एंड पालिटिकल वीकली* (Vol. 58, No. 50 Dec 14, 2013) में प्रकाशित कई लेखकों में धर्म निरपेक्षीकरण की चर्चा की गयी है तथा इसके संबंधों के विभिन्न पहलुओं के संदर्भ में भी खासकर भारत, पाकिस्तान और बाँग्लादेश के संदर्भ में चर्चा की गई है। यह धार्मिक समूहों के अधिकारों एवं व्यक्तियों के संबंधों की प्रकृति के बारे में है। यह आचार–विचार एवं नैतिकता के बारे में भी है।

धर्म–निरपेक्षीकरण का मतलब है धर्म का सार्वजनिक नीतियों एवं सामाजिक संबंधों पर प्रभाव न होना। लेकिन यह धर्म को नकारता भी नहीं हैं। यह दिखाता है कि धर्म किस आधार पक्षपात एवं भेदभाव का आधार बन जाता है। यह आधुनिकता एवं आधुनिकीकरण के बारे में है। धर्म–निरपेक्षीकरण ''सामूहिक नैतिक प्रोजेक्ट'' होनी चाहिये। जबकि यूरोप में धर्मनिरपेक्षता को ''सामूहिक गतिविधि के कार्यक्रम'' के आधार पर लागू नहीं किया गया (राजीव भार्गव)। धर्म–निरपेक्षीकरण की धारणा का प्रयोग करते हुए, जोया चटर्जी ने भारत एवं पाकिस्तान के विभाजन के बाद दोनों देशों के धर्म–निरपेक्षीकरण की नीति को अपनाया जो कि आंशिक थी। दोनों ने गैर–धार्मिक मुद्दों को उठाया, विशेषतौर पर विभाजन प्रभावित परिवारों के; शरणार्थियों का पुर्नवास। लेकिन धर्म–निरपेक्षीकरण आंशिक था। यह सीमित था जो कि राज्य के निम्न भागों में लागू नहीं था। उच्च स्तर के नौकरशाह धर्म–निरपेक्षीकरण को बढ़ावा दे रहे थे। प्रवसन से प्रभावित लोगों को स्थायी करने में तटस्थता की नीति को रोककर धार्मिक नीति को अपनाया जो कि इस संबंध में प्रभावकारी कारक है।

13.6 सारांश

धर्मनिरपेक्षता के प्रमुखता के दो अर्थ है : एक, धर्म को राज्य से अलग करना तथा दूसरा, सभी धर्मों का समान रूप से सम्मान करना अर्थात् सर्व–धर्म समभाव। संविधान की प्रस्तावना में धर्मनिरपेक्षता का जिक्र नहीं था इसे 42वें संविधान संशोधन के तहत् संविधान में शामिल किया गया था। संविधान सभा में धर्मनिरपेक्षता को शामिल करने के लिये काफी चर्चा हुई थी। संविधान सभा में तीन प्रमुख तर्क थे एक तर्क यह था कि धर्म निजी मसला है इसलिए इस पर चर्चा नहीं करनी चाहिए, दूसरा, धर्म और राज्य की बीच विभाजन होना चाहिए। ये दोनों अलग–अलग होने चाहिए, तथा तीसरा तर्क यह था कि राज्य को सभी धर्मों का सम्मान करना चाहिये, सर्व–धर्म समभाव'।

अभ्यास प्रश्न 2

टिप्पणीः क) अपने उत्तर के लिए नीचे दिए गए स्थान का प्रयोग कीजिए।

ख) अपने उत्तर का मिलान इकाई के अंत में दिए गए उत्तर से करें।

1) धर्मनिरपेक्षता विरोधियों के मुख्य तर्क कौन कौन से हैं?

....

....

....

....

....

2) धर्मनिरपेक्षता एवं धर्मनिरपेक्षीकरण में क्या अंतर है?

....

....

....

....

....

3) सैद्धांतिक दूरी की धारणा का क्या मतलब हैं?

....

....

....

....

....

13.7 संदर्भ सूची

ई.पी.डब्ल्यू, *इश्यूस ऑन सेक्यूलरिज्म*, दिसंबर 14, 2013।

चंडोक, नीरा, (1999), *बीयोंड सेक्यूलरिज्म : द राइटस एंड रिलिजियस माइनोरिटिस*, नई–दिल्ली, ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस.

बिलग्रामी, अकिल, (2012), *सेक्यूलरिज्म : इट्स कान्टेंट एंड कान्टेक्सट*, ई.पी.डब्ल्यू, न. 4, खंड 57,

भार्गव, राजीव (संकलित), (1999), *सेक्यूलरिज्म एंड इट्स क्रिटिकस*, नई–दिल्ली, ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस.

वनायक, अचिन, (2017), *हिन्दूत्वा राइजिंग : सेक्यूलर क्लेमस, क्यूमनल रीयालटीस*, नई–दिल्ली, तूलिया.

हरारी, युवाल नोह, (2018), *21 लेशन्स फॉर द 21 स्ट सेंचूरी*, लंदन, जोनाथन कैप।

13.8 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

अभ्यास प्रश्न 1

1 धर्मनिरपेक्षता का संबंध धर्म, राज्य, संस्थाऐं, सामाजिक समूहों और व्यक्तियों से है। इसकी दो धारणाऐं है, एक धारणा यह है कि धर्म और राज्य के बीच दूरी होनी चाहिए तथा दूसरी धारणा धर्म एवं समुदायों के बीच संबंधों के बारे में है, तथा व्यक्तियों के लोकतांत्रिक मूल्यों जैसे स्वतंत्रता और समानता एवं नैतिकता से है।

2 संविधान सभा में धर्मनिरपेक्षता पर तीन तर्क थेः एक राज्य को धार्मिक मामलों में हस्तक्षेप नहीं करना चाहिये, दूसरा, राज्य और धर्म दोनों अलग–अलग है तथा तीसरा, राज्य को सभी धर्मों के साथ समान व्यवहार एवं सम्मान करना चाहिए।

अभ्यास प्रश्न – 2

1) धर्मनिरपेक्षता विरोधियों को मानना है कि यह पश्चिमी अवधारणा है। भारत जैसे देश में धर्म को राज्य से अलग नहीं किया जा सकता है क्योंकि धर्म लोगों के जीवन का अहम हिस्सा है। वास्तविक धर्मनिरपेक्षता भारतीय परंपरा में निहित है, जिसका संबंध सहनशीलता से है। सही मायनों में धर्मनिरपेक्षता तभी जाकर प्राप्त की जा सकती है। जब हम सर्व–धर्म–समभाव के सिद्धांत को अपनाऐं। अर्थात् सभी धर्मों का सम्मान करना।

2) धर्मनिरपेक्षता का तात्पर्य है धर्म एवं राज्य के मध्य दूरी अथवा सभी धर्मों का समान आदर। धर्मनिरपेक्षता धर्म के राज्य की सामाजिक वर्गों से संबंधित नीतियों के प्रभाव के अभाव को दर्शाता है। इसका तात्पर्य उन नैतिक मूल्यों से भी जो विभिन्न धर्मों के अनुयाइयों के व्यवहार को निर्मित करते है।

3) सैद्धांतिक दूरी की अवधारणा को राजीव भार्गव ने प्रतिपादित किया है। इसका तात्पर्य राज्य के धर्म के साथ संबंध अथवा संबंध की कमी को एक लचीले दृष्टिकोण से देखना है तथा इसका अर्थ राजा के धर्म के प्रति एक समावेशी या बहिष्कारी दृष्टिकोण से भी है। धर्म के समावेश या बहिष्कार, परिप्रेक्ष्य तथा धर्म की वर्तमान स्थिति पर निर्भर करता है।

ignou
THE PEOPLE'S
UNIVERSITY

इकाई 14 सांप्रदायिकता*

संरचना

14.0 उद्देश्य

14.1 प्रस्तावना

14.2 संप्रदायवाद क्या है?

14.3 सांप्रदायिकता की उत्पत्ति

14.4 सांप्रदायिकता और राज्य

14.5 सांप्रदायिकता और मीडिया

14.6 सारांश

14.7 संदर्भ सूची

14.8 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

14.0 उद्देश्य

इस इकाई को पढ़ने के बाद आप यह जान पायेंगे :–

- सांप्रदायिकता के अर्थ की व्याख्या करना;
- भारत में सांप्रदायिकता के विकास को समझना;
- सांप्रदायिकता और मीडिया के बीच संबंधों की चर्चा करना; तथा
- सांप्रदायिकता और राज्य के बीच संबंधों का विश्लेषण करना।

14.1 प्रस्तावना

समाज में व्यक्ति या समूह के जीवन का महत्वपूर्ण पहलू उनकी पहचान है। किसी भी विविधता वाले समाज में, पहचान बनाने के कई कारक होते हैं। इसमें संस्कृति, भाषा, धर्म, रीति–रिवाज, इतिहास, क्षेत्र, अर्थव्यवस्था इत्यादि शामिल है। पहचान बनाने के लिए इनकी संख्या घटती–बढ़ती रहती है। इनकी संख्या एवं इनका प्रभाव पहचान के संदर्भ पर निर्भर करती है। यद्यपि पहचान को बनाने के कई सारे कारक होते हैं, लेकिन कभी–कभी इनमें एक या अनेक कारक अपनी महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। इनमें यह सत्य है कि धर्म एक प्रमुख कारक है पहचान बनाने के लिए। जैसाकि हम जानते हैं, भारत एक बहु–धार्मिक समाज है, हमें यह समझना होगा कि धर्म किस प्रकार से लोगों को पहचान बनाता हैं। किस प्रकार से विभिन्न धर्मा को मानने वाले लोग अपना संबंध स्थापित करते हैं।

14.2 सांप्रदायिकता क्या है?

सांप्रदायिकता एक विचारधारा है, जो किसी समुदाय के सदस्य के दृष्टिकोण को इंगित करती है। यह किसी धर्म पर आधारित होती है, या फिर किसी अन्य धार्मिक समुदायों, राष्ट्रवाद या राज्य के आधार पर होती है। बिपिन चन्द्र एवं अन्य ने अपनी पुस्तक ‘‘भारत

*डा. राकेश बटब्याल, एसोसिएट प्रो., सेंटर फॉर मीडिया स्टडीज, स्कूल ऑफ सोशल साइंसिज, जे. एन.यू. नई दिल्ली–110068

का स्वतंत्रता संघर्ष'' में सांप्रदायिक विचारधारा के तीन तत्वों को रेखांकित किया है। पहला तत्व इस बात को रेखांकित करता है कि लोग किसी विशेष धर्म में विश्वास रखते हैं, तथा उस धर्म के हित चाहे वह राजनीतिक, आर्थिक, सामाजिक या सांस्कृतिक हो उसकी रक्षा करते हैं। लेखक इसे ''सांप्रदायिक विचारधारा'' का प्रथम लक्ष्य मानते हैं। दूसरा तत्व इस बात की ओर इशारा करता है कि विभिन्न धार्मिक समुदाय के लोगों में समान हित नहीं होते हैं। सामाजिक, आर्थिक, सांस्कृतिक, या फिर राजनीतिक हित एक जैसे नहीं होते हैं। तीसरा तत्व यह दर्शाता है कि विभिन्न धार्मिक समुदाय के लोगों के बीच शत्रुता, प्रतिपक्षता एवं परस्पर विरोध होता है।

सांप्रदायिकता का संबंध एक अन्य धारणा से भी है वह है सांप्रदायिक हिंसा। दोनों अलग है लेकिन इनका अंर्तसंबंध भी है। सांप्रदायिकता एक जाग्रति है, और जब यह जागरूकता हिंसा में तब्दील हो जाती है किन्हीं दो धार्मिक गुटों के बीच में तब यह सांप्रदायिक हिंसा कहलाती है। विभिन्न धार्मिक समुदाय के लोग अपने आप से सांप्रदायिक नहीं बन जाते हैं। ना ही उनके संबंध अकस्मात सांप्रदायिक हिंसा का रूप लेते हैं। ये समुदाय तभी सांप्रदायिक बनती है जब किसी समाज का एक वर्ग इसे उकसाता है तथा यह बाद में सांप्रदायिक दंगों का भी रूप ले लेता है। यह खास वर्ग राजनीतिक दलों के नेता, कार्यकर्ता, मध्यम वर्ग का सामुदायिक नेता हो सकते हैं। ये नेता अपने समुदाय के सदस्यों को यह समझाते हैं कि दूसरे समुदाय के लोग उनकी समस्याओं के लिए जिम्मेदार है। ऐसी परिस्थिति में, ये लोगों को एकत्रित या लामबंद करते हैं और फिर सांप्रदायिक हिंसा फैलती है।

सांप्रदायिकता को समझने एवं उसका अध्ययन करने के लिए विभिन्न उपागम हैं। सर्वप्रथम जो अवधारणा है वह अनुभाविक अवधारणा जिसे विभिन्न विद्वानों ने विभिन्न सांप्रदायिक दंगों के अध्ययन में प्रयोग किया था। उसके बाद कई अन्य विद्वानों ने भी इसी अवधारणा को अपनाया जिसमें अमृता बसु, पॉल ब्रास, आशुतोष वार्ष्णेय इत्यादि शामिल है।

दूसरी अवधारणा है भौतिकवादी दृष्टिकोण, जो सामाजिक परिस्थितियों को निचले सिरे से समझने की कोशिश करता है, जिसमें राज्य की प्रकृति एवं उसकी भूमिका, विभिन्न समुदायों के संगठन निर्माण इत्यादि इसी दृष्टिकोण का हिस्सा है। सांप्रदायिक हिंसा की घटनाऐं इसी संदर्भ में ही देखी जाती है। के.टी. साह, बिपन चंद्र, अचिन वनायक, सी.पी. भांभरी, एवं आदित्य मुखर्जी इसी दृष्टिकोण के समर्थक माने जाते हैं। तीसरा दृष्टिकोण आवश्यक दृष्टिकोण या सार तत्व दृष्टिकोण है। इसमें सभी समुदाय के लोग अलग– अलग रहते हैं तथा इनके आंतरिक संबंध उन्हें अलग–अलग रखते हैं। अमेरिकन विचारक हंटिगटन ने अपनी पुस्तक *क्लेश ऑफ सिविलाइजेशन* में इस दृष्टिकोण की रूपरेखा प्रस्तुत की है।

14.3 सांप्रदायिकता की उत्पत्ति

सांप्रदायिकता एक विचारधारा के रूप में भारत में औपनिवेशिक शासन की उपज है। इस अर्थ में यह आधुनिक भारत में आधुनिक समय की उपज है। इसके पूर्व में भी, हमें ऐसे उदाहरण देखने को मिलते हैं जहाँ पर धार्मिक वाद–विवाद या हिंसा होती थी। लेकिन ये सांप्रदायिक नहीं होती थी क्योंकि इस अवधारणा की समझ केवल 19वीं सदी के मध्य में देखने को मिलती है। भारत में सांप्रदायिकता मुख्य तौर पर औपनिवेशिक शासन की नीतियों की देन है, विशेषकर 1857 के विद्रोह के बाद औपनिवेशिक शासन की नीतियाँ विभिन्न समुदायों की तरफ दोहरी थी। औपनिवेशिक शासकों ने इस दौरान कई चुनौतियों का सामना किया और इसी कारण उन्होंने ऐसी नीतियाँ बनाई, जिसने सांप्रदायिकता को

बढ़ावा दिया। इनमें बुद्धिजीवी वर्गों द्वारा औपनिवेशिक प्रशासन की आलोचना भी शामिल है जो कि 19वीं सदी के मध्य में भारत में उभर कर सामने आयी थी। यह बुद्धिजीवी वर्ग प्रायः नवीन अंग्रेजी शिक्षा व्यवस्था की उपज थी। इस बुद्धिजीवी वर्ग को यह महसूस हुआ कि, भारत के लोगों की पीड़ा औपनिवेशिक शासन की वजह से है। भाषाई जाति एवं पंथ के आधार पर अपनी पहचान बनाने के कारण इस नवीन बुद्धिजीवी वर्ग ने औपनिवेशिक शासन के विरूद्ध राष्ट्रीय चेतना जागृति की। इस प्रकार से इस नवीन बुद्धिजीवी वर्ग ने भारत के लोगों को प्रशिक्षित किया क्योंकि ये परंपरागत ज्ञान एवं नये पश्चिमी ज्ञान से प्रशिक्षित थे। इस चेतना के कारण उन्होंने ''राष्ट्रीय समुदाय'' के गठन का प्रयास किया, जिसमें सभी वर्ग शामिल थे। यह औपनिवेशिक समाज एवं राजनीति का मुकाबला करने के लिए था।

औपनिवेशिक सत्ता ने इस उभरती हुई राजनीतिक चेतना का जवाब भी दिया। इसमें उन्होंने भारतीय विविधता को आधार मानकर यह कहा कि ये लोग कभी भी संगठित नहीं हो सकते, दूसरा उन्होंने औपनिवेशिक ज्ञान का सृजन किया तथा तीसरा उन्होंने लोगों के मतभेदों को उजागर किया जो कि जाति, धर्म, भाषा इत्यादि के आधार पर मतभेद थे तथा विधायी एवं राजनीतिक निकायों में भी धर्म के आधार पर प्रतिनिधित्व देने के बात कही। इस बात का ज्ञान होने के बाद जेम्स मिल ने अपनी एक किताब लिखी ''ब्रिटिश भारत का इतिहास'' जिसमें उन्होंने इस बात का जिक्र किया कि भारत के इतिहास को तीन भागों में धर्म के आधार पर तीन कालों में बाँटा जा सकता है। प्राचीन काल, मध्य काल एवं आधुनिक काल। मिल ने इस बात का भी जिक्र किया कि भारत का प्राचीन काल स्वर्णिम काल था क्योंकि उस वक्त हिंदुओं का शासन था। जबकि मध्यकाल में मुस्लिम शासकों ने इसे आक्रमण करके तबाह कर दिया था तथा भारत का प्राचीन स्वर्ण युग का नाश कर दिया था एवं मुस्लिम शासन को स्थापित किया। आधुनिक शासन मुस्लिम शासन का अंत था और इसके स्थान पर ब्रिटिश या अंग्रेजी शासन भारत में स्थापित हो गया था। इस प्रकार के कालखंड का प्रयोग इतिहास विदों ने समाज को सांप्रदायिक आधार पर बाँटने के लिए किया था। क्योंकि भारत का ज्यादातर बुद्धिजीवी वर्ग हिंदु समाज के उच्च वर्ग से था। इसके विकास एवं विचारों को मुस्लिम बुद्धिजीवी वर्ग ने विरोध किया। सैयद अहमद खान उनमें से एक ऐसे ही विद्वान थे। 1987 में डफरिन तथा पी. कोलविन ने यह कह कर कॉंग्रेस पर हमला किया कि कॉंग्रेस साम्राज्यवाद विरोधी है। सैयद अहमद खान ने इसका समर्थन किया क्योंकि उनका मानना था कि इसे मुसलमानों का हिस्सा प्रशासन के पदों में बढ़ेगा। उनका विश्वास था कि हिंदु बुद्धिजीवी वर्ग एवं मध्यम वर्ग के विकास के कारण मुस्लिमों का प्रभुत्व घट गया है। इसका समाधान यह है कि मुसलमानों को अंग्रेजी शिक्षा प्राप्त करनी चाहिए। इसी उद्देश्य को पूरा करने के लिये उन्होंने 1875 में एंग्लो मोहम्मडन एंग्लों ओरयिन्टल कॉलेज की स्थापना की थी, जो कि बाद में अलीगढ़ मुस्लिम विश्वविद्यालय (ए.एम.यू) बन गया। उसी वक्त एक नये मुस्लिम मध्यम वर्ग का भी उदय हुआ। लेकिन यह मध्यम वर्ग काफी लोकप्रिय था और इसका दृष्टिकोण भी औपनिवेशिक विरोधी था। परंपरागत मुस्लिम वर्ग एवं नवीन मध्यम वर्ग की रणनीति यह थी कि वे लोक संस्थाओं में उनका प्रतिनिधित्व देने की माँग कर रहे थे। उनकी माँग शैक्षिक संस्थानों में आरक्षण देने की भी थी क्योंकि मुस्लिम विशिष्ट वर्ग भी विधायी एवं अन्य निकायों में राजनीतिक सत्ता एवं आरक्षण की माँग कर रहे थे।

इसी वजह से 1906 मे मुस्लिम लीग का गठन हुआ जिसे ब्रिटिश औपनिवेशिक सरकार द्वारा भी उकसाया गया। अन्य क्षेत्रों में भी ब्रिटिश सरकार ने हिन्दु धर्म के कुछ वर्गों को उकसाया ताकि कॉंग्रेस के अंतर्गत राष्ट्रीय एकता को बाँटा जा सके। सरकारी नौकरियों में आरक्षण की माँग तथा विधायी निकायों में मुस्लिमों को प्रतिनिधित्व देने की माँग भी हिन्दुओं

के एक वर्ग ने उठायी। हिन्दु एवं मुस्लिमों के बीच प्रतिस्पर्धा को देखते हुए उन्हें सरकारी नौकरियों में आरक्षण एवं विधायी निकायों में प्रतिनिधित्व दिया गया। बाद में, इन्हीं माँगों को मुस्लिम लीग ने उठाया। वास्तव में इसके पूर्व में भी मुस्लिम बुद्धिजीवी वर्ग और मुस्लिम लीग ने भी मुस्लिम जमींदारों एवं मध्यम वर्ग का प्रतिनिधित्व किया क्योंकि इन दोनों की माँग एवं दृष्टिकोण एक समान था।

कुछ हिन्दु इतिहासकारों के अनुसार, मुस्लिम आक्रमणकारियों ने हिन्दुओं की प्रतिष्ठा को बर्वाद किया जबकि कुछ इतिहासकारों के अनुसार ब्रिटिश सत्ता ने इस्लाम की प्रतिष्ठा को नुकसान पहुँचाया। उनके अनुसार इस्लाम की प्रतिष्ठा को वापस एक बार फिर से बहाल करना होगा। यह तभी संभव है जब भारत में इस्लामिक शासन की स्थापना हो। इन दो संस्करणों ने ही द्वि–राष्ट्र के सिद्धांत को जन्म दिया। भारतवासियों को सांप्रदायिक आधार पर बाँटने की नीतियों के मद्देनजर 1909 में मार्ले मिंटो सुधार लागू किया गया, जहाँ अलग निर्वाचित मण्डल को लागू किया गया। प्रत्यक्ष निर्वाचक मण्डल के अनुसार, 1909 के निगम चुनावों में, हिन्दु एवं मुस्लिम दोनों के अलग क्षेत्रों से चुनाव लड़ा जहाँ प्रत्याशी एवं मतदाता दोनों ही एक धर्म के हों। यह निर्वाचक मण्डल ही सांप्रदायिक विभाजन की अभिव्यक्ति थी। 1920 से और अधिक प्रतिनिधित्व की माँग तथा हिस्सेदारी भी बढ़ती गयी। 1920 के दशक में खिलाफत आंदोलन की शुरूआत हुई जिसने पहली बार मुस्लिम समुदाय के लोगों को राजनैतिक घेरे में लाया गया। इन सब बातों का अर्थ यह था कि अलग पहचान के आधार पर बीज बोया जा रहा था खासकर गैर–धार्मिक हित को ध्यान में रखकर लेकिन ये सब धर्म के आड़ मे ही हो रहा था। औपनिवेशिक शासन ने 1930–32 गोलामेज सम्मेलन का आयोजन किया गया जहाँ पर सभी वर्गों का प्रतिनिधित्व था।

हिन्दुओं की तुलना में मुसलमानों की अंग्रेजी शिक्षा सीमित थी। शिक्षित हिंदुओं और मुसलमानों में सरकारी नौकरियों के लिए प्रतिस्पर्धा शुरु हो गयी। इससे उनके अंदर यह महसूस हुआ कि अन्य समुदाय की वजह से उन्हें सरकारी नौकरियाँ नहीं मिल पा रही थीं तथा राजनीतिज्ञ संस्थानों में उन्हें प्रतिनिधित्व भी नहीं मिल रही थी। हिन्दु वर्ग के लोग भी यह मानते है कि मुस्लिम वर्गों की वजह से उनके हित पूरे नहीं हो रहे थे तथा मुस्लिम समुदाय वर्ग के लोग यह मानने लगे कि हिंदुओं के कारण उनके हित पूरे नहीं हो रहे थे। साम्प्रदायिकता के संदर्भ में विभिन्न धार्मिक समुदायों के गैरधार्मिक हित एक दूसरे के विरोधी होते हैं। इस प्रकार भारत में सांप्रदायिकता का विकास 19वीं सदी के अंत से देश के बंटवारे तक हुआ।

अभ्यास प्रश्न 1

टिप्पणीः क) अपने उत्तर के लिए नीचे दिए गए स्थान का प्रयोग कीजिए।

ख) अपने उत्तर का मिलान इकाई के अंत में दिए गए उत्तर से करें।

1) सांप्रदायिकता क्या है?

....

....

....

....

....

2) सांप्रदायिकता एवं सांप्रदायिक हिंसा में क्या संबंध है?

....

....

....

....

....

3) भारत में सांप्रदायिकता की उत्पत्ति का संक्षिप्त विवरण दीजिए।

....

....

....

....

....

14.4 सांप्रदायिकता और राज्य

सांप्रदायिकता प्रायः विभिन्न समुदायों के बीच सांप्रदायिक हिंसा को बढ़ावा देती है। भारत में ऐसे कई उदाहरण है सांप्रदायिक हिंसा के। सांप्रदायिक हिंसा धर्म का राजनीति में इस्तेमाल करने का परिणाम है। स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद भारत में, सांप्रदायिकता चुनावी राजनीति का भाग बन गयी है। के. एन. पाणीकर (1990) के अनुसार राजनीति एवं सांप्रदायिकता एक दूसरे के पूरक बन गये हैं, तथा स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद यह और मजबूत हुई है। राजनीति हमेशा ऐसी नीतियाँ बना सकती है जिससे सांप्रदायिकता बढ़ सकती है या रुक सकती है। राजनीति सांप्रदायिक राजनीति में विभाजन की भूमिका भी अदा कर सकती है। राज्य सांप्रदायिकता को रोकने में या उसके फैलने में अपनी महत्वपूर्ण भूमिका कर सकती हैं। सांप्रदायिकता के ऊपर राज्य की भूमिका की प्रकृति इस बात पर निर्भर करती है कि राज्य पर किसी समुदाय का कितना दबाव है तथा राज्य में तैनात उसके कर्मी किस पृष्ठभूमि से आते हैं, तथा उनका राजनैतिक संदर्भ क्या है।

इस प्रकार राज्य विभिन्न समूहों एवं विभिन्न वर्गों के दबाव में कार्य करता है। इसमें धार्मिक समुदाय भी शामिल है। जैसा कि आपने ऊपर पढ़ा है औपनिवेशिक शासन ने धार्मिक विभाजन को बढ़ावा दिया। उनकी नीति भेदभाव एवं पक्षपातपूर्ण रही है। सी.पी. भांभरी के अनुसार, स्वतंत्रोत्तर काल में धार्मिक पिछड़ापन एवं धार्मिक टकराव ज्यादा बढ़ा। इसका संदर्भ, भेदभाव, पक्षपात एवं ब्रिटिश सरकार की विभाजनकारी नीतियाँ प्रमुख थी जो कि स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद भारत में प्रमुखता से दिखाई दी। भारत में राज्य का स्थान विरोधीभासी स्थिति में है, एक तरफ इसे नियम एवं कानूनों के तथा नयी तकनीक के हिसाब से कार्य करना है वहीं दूसरी तरफ इसे समाज के नियमों के अनुसार भी चलना है जहाँ रीति–रिवाज, प्रतीक सामाजिक नियम प्रचलित हैं। यदि राज्य इन पारंपरिक रीति–रिवाजों के विरोध के कार्य करता है तो वह समाज की वफादारी एवं निष्ठा खो देगा। इनमें सबसे प्रमुख उदारहण मुस्लिम पर्सनल लॉ (1985), आपरेशन ब्लू स्टार (1984), सबरीमाला (2019) संबंधित मुद्दे हैं। भारत जैसे लोकतांत्रिक देश में, विभिन्न वर्ग राज्य पर दबाव बनाने की कोशिश करते हैं, तथा वे राज्य में अपना प्रतिनिधित्व करना चाहते हैं। राज्य एक प्रकार से विभिन्न विचारधाराओं एवं प्रवृतियों का स्थल बन जाता है जिसमें धर्मनिरपेक्षवादी एवं

सांप्रदायवादी भी शामिल है। समाज की ही तरह राज्य में भी विभिन्न विचारधाराओं के बीच मुकाबला होता है जैसे सांप्रदायिकता बनाम धर्मनिरपेक्षता। स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद राज्य ने टकरावों के प्रबंधन की रणनीति अपनाई जिसमें सहयोग एवं उत्पीड़न दोनों ही शामिल है। यह सांप्रदायिकता एवं जातिवाद से समझौता भी करता है तथा शोषित वर्ग धार्मिक भावनाओं को भड़का कर समाज में शोषण को बढ़ावा देता है। जोया हसन (1990) ने यह दलील दी कि राज्य ने धार्मिक कट्टरपंथियों के सामने आत्म समर्पण कर दिया है जिसमें मुस्लिम महिला बिल एवं राम जन्म भूमि केस शामिल है।

14.5 सांप्रदायिकता और मीडिया

मीडिया अपने नये रूप में, विचारधाराओं को फैलने में मदद करता है। जैसा कि परगन हैबरमारू ने यूरोप के संदर्भ में कहा है कि जन संगठनों क्लब, अखबार, नोवेल, टेक्सट बुक इत्यादि ने विचारों को फैलाने के काफी मदद की थी। बेंडिक्ट एंडरसन ने उदाहरण के तौर पर राष्ट्र को ''काल्पनिक समुदाय'' (Imagined Community) माना है, क्योंकि इसकी उत्पत्ति कल्पनातीत विचारों का प्रिंट मीडिया ने 18वीं सदी से की थी।

भारत में सांप्रदायिकता के संबंध में मीडिया सांप्रदायिकता को बढ़ाने में एक प्रभावी भूमिका अपनाता है। इसकी भूमिका काफी अहम होती है जब यह सांप्रदायिक दंगों एवं हिंसा को रिपोर्ट करता है एवं उस पर टिप्पणी करता है। किस प्रकार इसमें हिंसा बढ़ी है, उसके कारण क्या है, नेताओं की भूमिका किस प्रकार की है तथा विभिन्न समुदायों एवं नेताओं की भूमिका क्या है। मीडिया में प्रिंट मीडिया, अखबार, मैगजीन, और इलेक्ट्रोनिक मीडिया में टेलीविजन चैनल तथा सोशल मीडिया में वाटसऐप, फेसबुक ट्विटर तथा मेल शामिल है। हालांकि मीडिया लोगों में जागृति पैदा करने में निर्णायक भूमिका निभाता है, लेकिन, कई अवसरों पर इसने देश को सांप्रदायिक विभाजन में भी योगदान दिया है। हाल ही के वर्षों में, जाली खबर (फेक न्यूज) बहुत आम बात बन गयी है जिससे समाज में सांप्रदायिक तनाव पैदा होता है। मीडिया की खबर कभी–कभी अफवाहें फैलाती है जिसका कोई आधार नहीं होता है। सोशल मीडिया की पहुँच अब बहुत ज्यादा है जो कि पहले अन्य मीडिया की नहीं थी। इस पर सेंसरसिप का भी नियंत्रण नहीं है इसलिए कोई भी सूचना जिसमें हिंसा की बात हो, विभिन्न समूहों में बड़ी तेजी से फैलती है।

अभ्यास प्रश्न 2

टिप्पणीः क) अपने उत्तर के लिए नीचे दिए गए स्थान का प्रयोग कीजिए।

ख) अपने उत्तर का मिलान इकाई के अंत में दिए गए उत्तर से करें।

1) राज्य की भूमिका सांप्रदायिकता को बढ़ाने में किस प्रकार की है?

....

....

....

....

....

....

....

2) सांप्रदायिकता एवं मीडिया के संबंधों के बारे में संक्षिप्त विवरण दीजिए।

....

....

....

....

....

14.6 सारांश

सांप्रदायिकता एक विचार धारा है जो धर्म के आधार पर समुदायों को उपदेश देता है तथा किसी एक समुदाय के हित दूसरे धार्मिक समुदाय के साथ साझा करते है। राजनीतिक संदर्भ में सांप्रदायिकता, सांप्रदायिक हिंसा को बढ़ावा देती है। यह इसलिए होता है क्योंकि राजनीतिक नेतृत्व की भूमिका इसमें अहम होती है। कुछ राजनीतिक कार्यकर्त्ता तथा नेता समुदायों के बीच के अंतरों को साम्प्रदायिकता में बदल देते हैं। पिछले कुछ समय में सोशल मिडिया भी इसमें महत्त्वपूर्ण भूमिका निभा रहा है। सांप्रदायिक दंगे एवं बड़े पैमाने पर भारत में सांप्रदायिक हिंसा हमें पिछली दो सदियों की याद दिलाता है जहाँ पर विभाजन कारी राजनीति तथा औपनिवेशिक शासन की फूट डालो राजनीति की नीति इसकी प्रमुख वजह थी।

14.7 संदर्भ सूची

चंद्र, बिपन, (1988), मुखर्जी, मृदुला, मुखर्जी, आदित्य, महाजन, सुचित्रा, एवं पाणिकर, के. एन. (1988) *इंडिया'स स्ट्रगल फॉर इंडेपेंडेंस*, नई दिल्ली, पेंगविन.

बटबयाल, राकेश, (2005), *कम्यूनलिज्म इन बंगाल : फ़ोम फेमिन टू नौखाली, 1943–47*, नई दिल्ली, सेज प्रकाशन.

भाँभरी, सी. पी. (1990), ''स्टेट एंड क्मूयनलिज्म इन इंडिया'', *सोशल साइंटिस्ट*, खंड, 18, नबंवर, 8–9, अगस्त–सितंबर, 1990, पेज 22–26.

हसन, जोया (1990), ''चेंजिंग ओरिंयटैंशन ऑफ द स्टेट एण्ड इमरजेंस ऑफ मेजोरिटेरिनिज्म इन द 1980'' पाणिकर, के. एन (1990), ''इन्ट्रोडक्शन'', *सोशल साइंटिस्ट*, अगस्त–सितम्बर

14.8 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

अभ्यास प्रश्न 1

1) सांप्रदायिकता एक विचारधारा है जो किसी समुदाय के सदस्य एक समान दृष्टि साझा करते है जो कि धर्म पर आधारित होती है एवं राष्ट्रवाद पर आधारित होती है। इसके तीन प्रमुख तत्व है :– प्रथम, धार्मिक समुदाय के सदस्य समान हित साझा करते हैं, द्वितीय, दो अलग–अलग धर्म के सदस्य समान हित साझा नहीं करते तथा तीसरा, विभिन्न धार्मिक समुदायों के बीच रिश्ते शत्रुतापूर्ण होते हैं।

2) सांप्रदायिकता एवं सांप्रदायिक हिंसा दोनों अलग है लेकिन दोनों एक दूसरे के साथ जुड़े हुए हैं। सांप्रदायिकता एक विचारधारा है जो लोगों को धार्मिक मूल्यों का प्रवचन

देती है एवं सभी धार्मिक समुदाय के लोग समान सामाजिक, आर्थिक, राजनीतिक हित साझा करते हैं। जबकि सांप्रदायिक हिंसा विभिन्न समुदायों के बीच हिंसात्मक अभिव्यक्ति है।

3) यह 19वीं सदी के दूसरे मध्य में उभर कर सामने आया, जो कि उपनिवेश काल था। यह ब्रिटिश सरकार की फूट डालो एवं राजनीति करो की नीति थी। यह एक बुद्धिजीवी वर्ग द्वारा उपनिवेशिक शासन का विरोध जताने वाला समय था। यह बुद्धिजीवी वर्ग सरकारी नौकरियों में धार्मिक आधार पर आरक्षण देने की माँग करता है।

अभ्यास प्रश्न 2

1) राज्य सांप्रदायिकता को बढ़ावा देने में दो तरह से भूमिका निभाता है, एक यह ऐसी नीतियाँ बनाता है जो या तो सांप्रदायिकता को बढ़ाता है यह उसे कम करता है, दूसरा यह ऐसी संस्थाओं था लोगों के खिलाफ कार्यवाही कर सकता है जो सांप्रदायिक हिंसा फैलाते है। राज्य की भूमिका उन लोगों पर निर्भर करती है जिनका राज्य पर नियंत्रण या दबाव होता है।

2) मीडिया एवं सांप्रदायिकता एक दूसरे के साथ जुड़े हुए है। मीडिया भी सांप्रदायिकता को बढ़ाने एवं इसके विरूद्ध आवाज उठाने में अहम भूमिका निभाता है। 21वीं सदी में सोशल मीडिया बहुत निर्णायक भूमिका निभा रहा है भारत में सांप्रदायिकता को बढ़ाने में। प्रायः मीडिया जाली खबर फैलाता है, तथा ऐसी सूचनाऐं देता है जो कि सांप्रदायिकता को बढ़ाने में मदद करता है।

ignou
THE PEOPLE'S
UNIVERSITY